Original Article
ISSN (Online): 2582-7472

ShodhKosh: Journal of Visual and Performing Arts
July-December 2022 3(2), 321–325

THE BASIS FOR THE CREATION OF THE DEPICTION DESCRIBED IN THE CHITRASUTRA

चित्रसूत्र में वर्णित चित्रण सृजना के आधार

Hari Om Shanker [1]

[1] Associate Professor, Department of Drawing and Painting, D. A.V.(P.G.) College, Dehradun Affiliated to Hemvati Nandan Bahuguna Central University, Srinagar Garhwal-246174 Uttarakhand, India

Received 30 August 2022
Accepted 13 October 2022
Published 29 October 2022

Corresponding Author
Hari Om Shanker,
drhariomshanker@gmail.com

DOI
10.29121/shodhkosh.v3.i2.2022.203

Funding: This research received no specific grant from any funding agency in the public, commercial, or not-for-profit sectors.

Copyright: © 2022 The Author(s). This work is licensed under a Creative Commons Attribution 4.0 International License.

With the license CC-BY, authors retain the copyright, allowing anyone to download, reuse, re-print, modify, distribute, and/or copy their contribution. The work must be properly attributed to its author.

OPEN ACCESS

ABSTRACT

English: The mention of Indian painting is found in various texts, as detailed, and clearly described in the Chitrasutra of Vishnudharmottara Purana, the painting is not found in any other text. The author has considered the work of a painter as a difficult practice. He has described the status of a painter as a yogi. The difference between the two is only that the yogi creates a world to which the common man cannot reach, he does not even imagine enjoying the pleasures of life, the painter enjoys bliss and fame in this material life as well as ecstasy and He also receives the Supreme. Gairola (1963) Painting is a long practice. The paths of his accomplishment are very difficult, but his results are equally excellent. From the Indian point of view, the best painting has been described as the means of worldly travel and the reason for the transcendental selflessness.

Chitrasutra is an episode in the third volume of Vishnudharmottara Purana from 35 chapters to 43 chapters. The entire Chitrasutra is divided into 9 chapters, in which detailed description has been given keeping in mind their elements and principles related to painting. In the context of Indian painting, Vishnudharmottara Prana's Chitrasutra is the only attested important text in which the broadness of the Indian painting method and the material of its ancient existence and the technique and method of depiction are mentioned in detail. In Chitrasutra, an attempt has been made to explain the technique and method of illustration in a very simple way, In Chitrasutra, Line drawing (Rekha Karma) is considered as the basis of painting technique, giving priority to it in the issue of draw figure, it has been instructed to make it with dark black or brown color using light and shad, the primacy of the line as the soul of Indian painting is a universal principle. I believe that the interpretation described in the Chitrasutra about the traditional drawing method of Indian painting and its technique is very important. This tradition can be seen in various styles of Indian painting like: Ajanta, Rajasthani Pahari etc.

Hindi: भारतीय चित्रकला का उल्लेख विभिन्न ग्रन्थों में मिलता है। विष्णुधर्मोत्तर पुराण के चित्रसूत्र में चित्रकला का जितना विस्तृत एवं स्पष्ट वर्णन किया गया है, उतना अन्य किसी ग्रन्थ में नहीं मिलता है। ग्रन्थकार ने चित्रकार के काम को कठिन साधना माना है। उन्होंने चित्रकार की स्थिति एक योगी के समान बतलायी है। दोनों में अन्तर इतना ही है कि योगी एक ऐसे लोक का निर्माण करता है, जहाँ साधारण व्यक्ति नहीं पहुंच सकता, वह जीवन के सुख के उपभोग की कल्पना भी नहीं करता है; चित्रकार इस भौतिक जीवन में आनन्द और यश के साथ-साथ परमानन्द और परमयश भी प्राप्त करता है। Gairola (1963) चित्र रचना एक लम्बी साधना है। उसकी सिद्धि के मार्ग बड़े दुर्गम हैं, किन्तु उसके परिणाम भी उतने ही श्रेष्ठ हैं। भारतीय दृष्टिकोण से श्रेष्ठ चित्रकर्म को ऐहिक लोकयात्रा का साधन और पारलौकिक निःश्रेयस का कारण बताया गया है।

Keywords: Chitrasutra, Vishnudharmottara Purana, Line, Colour Scheme. Illustration Process, Indian Tradition, Illustration Technique, चित्रसूत्र, सृजना, विष्णुधर्मोत्तर पुराण, रेखाकर्म, रंग योजना, चित्रण प्रक्रिया, भारतीय परम्परा, चित्रण तकनीक

1. प्रस्तावना

कला के द्वारा ही कल्याण का जन्म संभव है। मानव के विकास और संस्कृति का इतिहास कला के द्वारा ही आज तक इस पृथ्वी पर जीवित है। कला के आध्यात्मिक और धार्मिक मूल्यों से सहमति प्रस्तुत की गयी है, इसके साथ ही सामाजिक जीवन के साथ एकरस करने के प्रयत्न भी किये गये हैं। कौटिल्यकालीन समाज में कला को चारू और कारू - दो रूपों में स्वीकार किया गया था, जिनको बाद में क्रमशः ललित और उपयोगी नामों से कहा गया। ललित कला के अन्तर्गत संगीत (नृत्य, गायन, वादन), काव्य, चित्रकला, मूर्तिकला, स्थापत्यकला (भवन निर्माण) और अभिनय का समावेश हुआ। कला का यह वर्ग विभाजन न केवल मनोरंजन के लिए था, बल्कि सामाजिक, आर्थिक और वैज्ञानिक उपयोगिता के साथ-साथ उसका एक सूक्ष्म पहलू भी था। उसका यह सूक्ष्म पहलू धर्म और अध्यात्म के समन्वय से उत्प्रेरित था।

अध्यात्म और दर्शन के आधार पर कला के स्वरूप को निश्चित करने वाले विद्व़ानों ने कला को महामाया का चिन्मय विलास कहा है। वह महाशिव की सृष्टि-शक्ति है। शैव दर्शन में कला के आध्यात्मिक पक्ष के महत्व को असीम मापदण्ड पर स्वीकारा गया है। महामाया के पाँच प्रकार माने गये हैं - काल, नियति, राग, विद्या और कला। शिव की यह रूप शक्ति लीला भूमि में अवतरित होकर सृष्टि के लिए प्रेरित करती है। शिव की लीला-सहसंगिनी होने के कारण महामाया को "ललिता" कहा गया है। यही महामाया समस्त कलाओं का आधार है। "ललित" कला की देवी स्वयं अपार सौन्दर्य की स्वामिनी है। उनके द्वारा प्रसूत कलाओं का प्रयोजन सौन्दर्य की सृष्टि ही है।

सम्पूर्ण कला-दर्शन में आत्मा का आनन्द मूलरूप से निहित है। व्यक्ति के विशेष अनुभव का नाम आनन्द है। आनन्द की प्राप्ति सौन्दर्य चिन्तन से होती है। जीवन के किसी भी क्षेत्र में असुन्दर को पसन्द नहीं किया जाता है। वैदिक काल से लेकर महाकाव्य-काल तक समस्त चित्रकला, मूर्तिकला, साहित्य एवं कलात्मक वस्तुओं का निर्माण सौन्दर्य की पृष्ठभूमि पर ही हुआ है। आनन्द के मूल में सौन्दर्य की पृष्ठभूमि पर ही हुआ है। आनन्द के मूल में सौन्दर्य विद्यमान रहता है। सौन्दर्य से हम सत्य की ओर उन्मुख होते हैं। सत्य ही सुन्दर है। Saxena (1967)

जीवन में केवल सौन्दर्य ही नहीं, सत्य भी है। जहाँ एक ओर सुन्दर के मूल में आकर्षण की गरिमा है, वहाँ दूसरी ओर उसके निर्माण में सत्य का योग भी है। सौन्दर्य की अनुभूति से जिस आनन्द की प्राप्ति होती है, सत्य की अनुभूति से भी उसी आनन्द के दर्शन होते हैं। सौन्दर्य और सत्य के साथ आनन्दाभूति की प्रक्रिया में शिव तत्व भी निहित होता है। मानव-जीवन में शाश्वत भावनायें सत्य, शिव और सुन्दर की त्रिसूत्री धारा की गति प्रभावित होती है। Saxena (1967)

इस प्रकार स्पष्ट है कि भारतीय चित्रण-सृजना का प्रमुख आधार अध्यात्म अर्थात् सत्यं, शिवं, सुन्दरम् है, क्योंकि भारतीय चित्रकला सांसारिक दुःखमय जीवन को सुखद, सरस और आनन्दमय बनाने के साथ ही समस्त मानव मात्र का उत्थान कर उसके परम लक्ष्य जीवन के सत्य का साक्षात्कार भी करा देती है। ऐसी आध्यामिक कला-साधना द्वारा यहाँ के कलाकार और उनकी कला सदा लोक-कल्याण करती हुई चिरकाल तक अमर रहेगी।

चित्रसूत्रकार ने चित्रकला को सभी कलाओं से श्रेष्ठ कहा है। यह धर्म, काम, अर्थ और मोक्ष देने वाली बतलाई गई है। जिस घर में इसकी प्रतिष्ठा की जाती है, वहाँ पहले ही मंगल होता है। Chatterjee (1971)

कला की आत्मा का स्वरूप तत्वबोध के अन्तर्गत वह सत्य है जिसका भोग तो अनिवार्य है, लेकिन अनुभूति अन्तर्मुखी है। क्योंकि कला पक्ष के भौतिक आवरण के अन्तर स्थल में भाव रूपी सत्य विद्यमान रहता है। फलस्वरूप रूप का अस्तित्व-विहीन स्वरूप ही वह सत्य है, जो भाव की आध्यात्मिक प्रपंचना के उद्रेक अनुभूति से स्वरूप ग्रहण करता है। Sudhi (1988) जहाँ कलापक्ष सृजनात्मक कौशल की प्रतिष्ठा प्रस्तुत करने का सरल माध्यम है, वहीं भावपक्ष कला के जीवित सत्य को निभाने का एक निश्चित प्रतिरूप है। चित्रकला में भाव उसका प्राण है। चित्रण-सृजना में विपक्ष उसका सफल अंकन है। सूक्ष्म में इसे इस प्रकार भी स्पष्ट कर सकते हैं - जब सृजनात्मक तत्वों का सन्तुलित समानियोजन एकरूपता को प्राप्त कर लेता है, यदि उसकी अभिव्यक्ति भावों के सत्य को प्रकट करने में समर्थ हो जाती है, तो ऐसी

सृजना अपने कलापक्ष के अन्तिम रूप भावपक्ष को प्रस्तुत करती है। भारतीय चित्रकला की आध्यात्मिक पृष्ठभूमि में निश्चित दर्शन से जहाँ कला के योग की बात कही है, वहीं चित्रांकन में भावपक्ष को अनिवार्य भी माना है। भावपक्ष चित्रकार की अपनी अनुभूति के सामाजिक अनुभूति से साधारणीकरण को स्थापित करने की एक महत्वपूर्ण एवं व्यवस्थित प्रक्रिया है, जिसके अभाव में कला दस्तकारी तो कही जा सकती है, लेकिन उसको ललित कला की श्रेणी में नहीं रखा जा सकता, क्योंकि कला का ललित पक्ष ही उसका भावपक्ष माना गया है। भारतीय चित्रकला को ललित कला की मान्यता प्राप्त है, Sharma (2019) अतः उसमें भावपक्ष उसकी सृजना का प्रमुख आधार माना गया है।

भारतीय चित्रकला के षडंग चित्र में सौन्दर्य और आकर्षण उत्पन्न करने में सहयोगी होते हैं। सुन्दर चित्र की व्याख्या यही है कि जिसमें माधुर्य ओज और सजीवता हो। जीवित प्राणी के भौतिक चित्र में एक प्रकार की चेतना होनी चाहिए। रूप योजना के द्वारा चित्रण में बाह्य और आन्तरिक सौन्दर्य को जन्म दिया जाता है। भाव उसका प्राण है, जो चेतना (जीवन) का प्रतीक है। सादृश्य रूप सौन्दर्य और भाव की अभिव्यक्ति के आधार को बढ़ा देता है, जो लावण्य का आधार प्रमाण से निश्चित करता है और चित्र की कार्य-प्रणाली और चित्रण सामग्री, जिसका सम्बन्ध वर्णिकाभंग से है, चित्र को सजीवता प्रदान करता है। तब वही भाव कौशल की प्रक्रिया से "रस" की स्थिति को प्राप्त करता है।

हमारे षडंगकार चित्र को सजीव वस्तु मानते थे। इसका प्रमाण षडंग में ही विद्यमान है। Veereshwar and Sharma (2020) षडंग की रचना-प्रणाली को देखने पर भी चित्र को षडंगकार ने एक जीवनी-शक्ति की अभिव्यक्ति समझा था, उस अभिव्यक्ति के उपयुक्त षडंगसूत्र एक सजीवता प्रदान करते हुए रचते जाना ही उनका उद्देश्य था। षडंग के एक अंग का दूसरे अंग से योग है। संबंध आदि की विशेष रूप से आलोचना करके, जिसके बाद जिसे आना चाहिए, जिसका जहाँ स्थान है, उसी तरह सजाकर चित्र की मानो एक मंत्रमूर्ति खड़ी कर दी है। सारे षडंग के अन्दर छन्द की धारा बहाकर रूपभेद को, प्रमाण भाव को, लावण्य-साद्ृश्य को वर्णिकाभंग से और सभी अंगों से भी का एक अकाट्य और अविरोध संबंध स्थापित कर षडंग को एक ऐसी परिमिति गति दी गयी है कि षडंग एक छन्द से अनुप्राणित होकर सजीव रूप से प्रकट होकर ही रहे। चित्रकला में षडंग का सही प्रयोग रूप-प्रमाण की कामना (आकांक्षा) करता है। अतः प्रमाण आकर रूप में मिल जाता है। यह जैसे ही आकर मिलता है, वैसे ही भाव का उदय होता है, लावण्य का संचार होता है, सादृश्य की गवाही और विचित्र रंग-भंगिमा दिखलाई पड़ती है। अतः षडंग चित्रण-सृजना के प्रमुख आधारों में गिना जाता है।

चित्रकला का उद्भव यज्ञवेदियों की रेखाकृतियों से हुआ है। रेखाओं के माध्यम से अनिर्वचनीय विचारों का उद्घाटन भारतीय कलाकारों ने चित्रकला द्वारा किया है। कला के आचार्यों ने रेखा की बहुत प्रशंसा की है। उन्होंने कहा है कि रेखा के बिना चित्रांकन संभव नहीं है। रंग के द्वारा रेखाचित्र को स्पष्ट तो किया जा सकता है, रोचक और रूपित बनाया जा सकता है, रंग रेखा, को स्थान और स्थिति देता है, लेकिन रूप उत्पन्न करने की सामथ्र्य केवल रेखा में ही होती है। रंग की भी अपनी भाषा होती है, उसमें भाव-व्यंजकता होती है, उसका अपना एक आकर्षण भी होता है, क्योंकि प्रत्येक रंग आलोक की ही भंगिमा होता है। यदि रूप सृजन का सार होता है, तो रूप का स्रोत स्वयं रेखा है और कुछ भी नहीं। रेखा और रंग के कुशल संयोजन से चित्रकला में सृजना होती है।

ऐसा समझना भ्रम है कि रेखा और रंग का संबंध केवल चित्र से है, अन्य कलाओं में इसका प्रयोग नहीं है। मूर्तिकला, वास्तुकला, स्थापत्यकला तथा साजसज्जा करने वाला कोई भी कारीगर पहले रेखा के द्वारा ही खाका (स्केच) तैयार करता है। खाका (स्केच) रूपरेखा का ही नाम है। रेखा ही रूप का निरूपण अथवा रूपायन करती है, क्योंकि उसमें गति और शक्ति होती है। इसी सर्वतोमुखी गति और शक्ति के कारण वह असीम दिशाओं को रूप की सीमाओं में बांध सकती है। अरूप को रूप देना सृजन है। कला रूपायन द्वारा मन के गम्भीर भावों-तूफानों, वेदनाओं एवं ज्वालाओं को अभिव्यक्ति प्रदान करती है। रूपायन नहीं, तो कला नहीं। रेखा के बिना रूपायन नहीं हो सकता।

भाषा में स्वर और शब्द को रेखा ने ही स्थापित किया है। सच तो यह है कि रेखा-लेखा ही है। संस्कृत व्याकरण के अनुसार "रलयोरभेदः" अर्थात् "र" और "ल" में भेद नहीं है। सभी संस्कृतियों में चित्रांकन से ही लिखना शुरू हुआ है। रेखा से लिपि को और लिपि से भाषा को स्थिरता मिली है। रूप कला का प्राणतत्व है, जो रेखा के द्वारा निर्मित होता है। लय-लोच, सन्तुलन, संगीत रूप के प्रमुख विधान हैं। कृति-भणिति निर्मिति में यह विधान प्रकट होता है। ये रसिक द्वारा भोगे जाते हैं। रूप का प्रत्यक्ष रूप चेतना को

जगाता है। यही कला की अनुभूति का स्वरूप है। अतः चित्रण सृजना का एक प्रमुख आधार "रेखा" भी है।

2. विश्लेषण एवं सूत्रधार

भारतीय परम्परागत चित्रकला के आधीन चित्र बनाने के लिए पहली प्रक्रिया आजकल टिपाई कही जाती है, जिसमें किसी एक रंग से रेखा द्वारा चित्रकार चित्र का आकार टीपता है। इसकी प्रमाणिकता भारतीय परम्परागत चित्रकला के आधीन इस पर देखी जा सकती है। अजन्ता के भित्ति-चित्रण में इसकी प्रमाणिकता सिद्ध है। Agarwal (1965) वहाँ चित्रकारों ने सर्वप्रथम गहरे रंग से चित्र का आकार टीपा है। इस बात की पुष्टि चित्र सूत्र में भी की गयी है। चित्र सूत्र के अध्याय-40 के श्लोक 14-15 में निर्देशित है कि सूखे समतल पर गहरे रंग से आकार-सृजना का कार्य चित्रकार को बहुत बुद्धिमत्तापूर्ण ढंग से सर्वप्रथम करना चाहिए। अतः इस प्रसंग से यह निश्चय प्रमाणित है कि भारतीय चित्रकला में रंगयोजना का विधान सुनिश्चित है। मेरा तर्क है कि इसी प्रारम्भिक प्रक्रिया से चित्र में रंग का श्रीगणेश होता है। इस कार्य को "मेघदूत" में 2/42 में वर्णित आस्था से पुष्टि मिलती है। यहाँ पर लाल रंग की रेखाओं की टिपाई का संकेत है, जबकि "कादम्बरी" में अनुच्छेद-253 में काले रंग की टिपाई का विवरण है। ये दोनों प्रसंग चित्र सूत्र में किसी गहरे रंग की टिपाई की पुष्टि करते हैं।

अतः निष्कर्षतः मैं कह सकता हूँ कि टिपाई के कार्य से ही भारतीय चित्रकला में रंग की प्रपंचना प्रारम्भ होती है। मेरे विचार से रंग के प्रयोग में यह कार्य रंग की शेष प्रक्रिया से अधिक कठिन और जटिल है, क्योंकि रंगीन रेखाओं का तूलिका से गति और प्रवाह से युक्त अंकन प्रस्तुत करने के लिए चित्रकार को तूलिका का श्रेष्ठ अभ्यासी होना चाहिए, क्योंकि इन्हीं रेखाओं की श्रेष्ठता के आधार पर भारतीय परम्परागत चित्रों का मूल्यांकन निर्भर करता है। जैसा कि पूर्व में चित्रसूत्रकार ने बतलाया है कि चित्र. में चित्रकला के विद्वान रेखा की श्रेष्ठता की प्रशंसा करते हैं। इस प्रकार से मेरा यह मत है कि भारतीय परम्परागत चित्रकला में रंगयुक्त रेखांकन ही उसका सबसे महत्वूपर्ण अंग है।

चित्रसूत्र में प्राथमिक रंगों का वर्गीकरण प्रस्तुत करके और अन्य रंगों के साथ रंगों की संगत से अनेक रंग प्राप्त करने का जो विवरण मिलता है, वह इस बात की ओर संकेत करता है कि आवश्यकतानुसार भारतीय परम्परागत चित्रकार को रंगों के मिश्रण से नवीन रंग उपलब्ध कर लेना चाहिए। यहाँ पर यह बात उल्लिखित करना मैं महत्वपूर्ण समझता हूँ कि जहाँ चित्रसूत्रकार ने अनेक रंगत तैयार करने की बात कही है, अगर उस पर बहुत गंभीरता से चिन्तन न किया जाये तो भ्रम भी उत्पन्न हो सकता है। क्योंकि चित्रसूत्र में वर्तना शब्दावली का प्रयोग किया गया है, जिसकी अंग्रेजी में "शैडिंग" कहते हैं और जिसका सीधा अर्थ छाया और प्रकाश से लगाया जा सकता है, जिसके लिए गहरी और हल्की रंगतों का प्रयोग किया जाना सम्भावित है।

इस धारणा के विपरीत मैं अपना मत प्रस्तुत करता हूँ। यहाँ चित्रसूत्रकार ने छाया और प्रकाश पर चिन्तन प्रस्तुत नहीं किया है, वरन् एक रंग में दूसरे रंग के मिश्रण से नये रंग की उपलब्धि की बात कही है। मेरा यह तर्क सैद्धान्तिक प्रक्रिया में मूल्यांकित किया जाना चाहिए, क्योंकि मैं अपने पक्ष में कहना चाहता हँू कि भारतीय परम्परागत चित्रकला में रंग-विधान प्रक्रिया में आकृतिगत रंग में छाया और प्रकाश का कोई अस्तित्व नहीं है, क्योंकि वहां किसी एक रंग को सपाट भरा जाता है और विशेष परिस्थितियों में उभार को आकर्षित बनाने के ऊपर से हल्का रंग लगाया जाता है। आज तक कोई ऐसा उदाहरण नहीं है कि चित्र में गहराई और उभार के लिए छाया और प्रकाश का प्रयोग प्रत्यक्ष रूप से किया गया हो। Agarwal (2018) क्योंकि इस बात की पुष्टि चित्रसूत्रकार ने भी की है। उन्होंने लिखा है कि रंगों वाले लेपों से चित्र की आकृतियों के अनुसार उसे कल्पित करे (3.40.10)। अतः यह बात मान लेनी है कि चित्रसूत्र में वर्णित रंग विधान की प्रक्रिया मूलरूप से भारतीय परम्परागत चित्रकला के लिए सैद्धान्तिक और महत्वपूर्ण है।

3. निष्कर्ष

विष्णुधर्मोत्तरपुराण का परिशिष्ट "चित्रसूत्र" भारतीय परम्परागत चित्रण-विधा पर एक श्रेष्ठ व्याख्यान है। चित्रकार, चित्रण-प्रक्रिया, चित्रण तकनीकी, चित्रण-विधि, आकृति-निरूपण, चित्र के महत्वपूर्ण अंग,

चित्र के दोष और गुण, चित्रण की तैयारी, चित्र के प्रकार, भित्ति तैयार करना, रेखा के विभिन्न प्रयोग, रंगों का बनाना और उनका प्रयोग करना और चित्र को नृत्य के समान बतलाकर अभिनय-प्रक्रिया के माध्यम से रस-निष्पत्ति तक सिद्धि प्राप्त करने की पूरी योजना उसके अध्यास 35 से 43 तक में प्राप्त हो जाती है। मेरा यह सशक्त मत है कि भारतीय चित्रकला के पम्परागत चित्रण-विधान और उसकी तकनीकी के विषय में चित्रसूत्र में वर्णित आख्यान न केवल महत्वपूर्ण हैं, वरन् वे स्वतः सिद्ध सैद्धान्तिक अवधारणायें हैं, जिनकी पुष्टि परम्परागत भारतीय चित्रकला की विभिन्न शैलियों - अजन्ता शैली, राजस्थानी शैली, मुगल शैली और पहाड़ी शैलियों में बड़ी ही सरलता से देखी जा सकती है। Saxena (2013)

यहाँ पर मैं इस भ्रान्ति का भी निवारण करना चाहूँगा कि चित्रसूत्र में जिस चित्रण तकनीकी और चित्रण-विधि की विवेचना मेरा द्वारा उपरोक्त में की गयी है, उसका परिक्षेत्र और सीमायें नितान्त मौलिक रूप से भारतीय परम्परागत चित्रकला तक ही सीमित है। मैं अपने इस विचार की पुष्टि कला-विद्वान, सी0 शिवारामामूर्ति के उस कथन से करता हूँ कि जिसमें उन्होंने स्पष्ट माना है कि यह केवल पम्परागतगत रूप से चित्रकारों के द्वारा निभाया गया है। यह प्रमाणित सत्य है कि चित्रसूत्र चित्रण-तकनीकी और चित्रण-विधि के जितने प्रसंग उल्लिखित है, वे सब परम्परागत चित्रकारों के लिए ही मान्य है। वर्तमान की समकालीन आधुनिक चित्रकला पर वे नियोजित नहीं किये जा सकते। मुझे अपनी इस धारणा में न भ्रम और न ही मैं इससे विचलित होने की किसी स्थिति का अनुमान कर सकता हूँ।.

CONFLICT OF INTERESTS

None.

ACKNOWLEDGMENTS

None.

REFERENCES

Agarwal, V.S. (1965). Indian Art. Varanasi : Prithivi Prakashan.

Agarwal, R.A. (2018). Kaka Vilas Bhartiye Chitakala Ka Vivechan. Meerut : International Publishing House.

Chatterjee, A. C. (1971). Vishudharmottarapuranam. Varanasi : Varanaseya Sanskrit Vishvavidyalaya.

Gairola, V. (1963). Bhartiya Chitrakala Ka Sanshipt Itihas : Mitra Prakaashan Pvt. Limited.

Saxena, R. (1967). Kala Saundary aur Jeevan. Dehradun : Rekha Prakaashan.

Saxena, S.B.L. (2013). Art Theory and Tradition. Bareilly : Prakash Book Depot.

Sharma, L.C. (2019). Brief History of Indian Painting. Meerut : Krishna Prakashan.

Sudhi, P. (1988). Aesthetic Theories of India. New Delhi : Intellectual Publishing House.

Veereshwar, P., and Sharma, N. (2020). Meerut : Krishna Prakashan.